सामाजिक– धार्मिक सुधार आन्दोलन में राजा राम मोहन राय का योगदान

R.P. Gupta U.G.C. NET, J.R.F. And Research Scholar

अट्ठारवीं शताब्दी का भारतीय समाज आर्थिक दरिद्रता से तो जूझ ही रहा था, साथ ही धर्म भी बुरी तरह से प्रभावित था। भारतीय समाज पूरी तरह से अंधविश्वासों और धार्मिक आडंबरों के जाल में फँस चुका था। सम्पूर्ण भारत में बौद्धिक दिवालियापन का बादल छाया हुआ था। कहीं से सामाजिक सुधार की कोई गुंजाइश नहीं दिखायी पड़ रही थी। मैक्स बेवर ने लिखा है कि हिन्दू धर्म दरअसल ''जादू अंधविश्वास और अध्यात्मवाद की खिचड़ी'' बनकर रह गया था। ईश्वर की पूजा की जगह पशु–बलि और शारीरिक यातना दी जाती थी। पुजरियों और धर्माचायों का समाज पर जबरदस्त प्रभाव था। मूर्तिपूजा और बहु–देवोपासना ने इसके वर्चस्व में चार–चाँद लगा रखा था। सारे अध्यात्मिक ज्ञान का ठेका इन्होंने ही ले रखा था और मनमाने ढंग से धार्मिक रीति–रिवाजों व नियमों की व्याख्या करते थे, अतः सुधारकों की दृष्टि सबसे पहले धर्म पर ही पड़ी। राजा राम मोहन राय के अनुसार इन पुजारियों ने धर्म को धोखाधड़ी और पाखण्ड के तंत्र में बदल दिया था। इनकी इच्छा, आज्ञा और मर्जी को स्वीकार करना ईश्वर का आदेश माना जाता था। ऐसा कोई भी कार्य नहीं था जिसे धर्म का नाम लेकर लोगों से कराया न जा सके। हालात यह थी किह पुजारियों, धर्मोंचार्यों की यौन–तृष्टि के लिए महिलाएँ, खुद अपने आपको समर्पित कर देती थी।

सर्वप्रथम धर्म सुधार आन्दोलन बंगाल से प्रारंभ होता है जो देश के पूर्वी भाग में स्थित है, यहाँ इसका नेतृत्व राज राममोहन राय (1833) ने किया था। इसी कारण राजा राममोहन राय को भारतीय पुनर्जागरण का जनक और आधुनिक भारत का निर्माता भी कहा जाता है।

राजा राममोहन राय का जन्म बंगाल के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे और स्वाभाव से विद्रोही थे। अपने विचारों के कारण उन्हें अपने कट्टरपंथी परिवार से बाहर निकाल दिया गया था। कुछ समय तक वे इधर–उधर भटकते रहे, परन्तु इस अवधि में उन्होंने विभिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया और अरबी, फारसी तथा संस्कृत के अच्छे ज्ञाता बन गये, उन्होंने अंग्रेजी, फ्रेंच, ग्रीक, लैटिन जर्मन और हिब्रू भाषाएँ भी सीखी। भारतीय भाषाओं द्वारा उन्होंने भारतीय धर्म और परंपराओं का अध्ययन किया और विदेशी भाषाओं द्वारा इस्लाम,

ईसाई एवं विश्व के अन्य धर्मों का अध्ययन किया, जिसके कारण वे विश्व के अन्य भागों विशेषकर यूरोप की सभ्यता– संस्कृति तथा आधुनिक ज्ञान के सम्पर्क में आये।

राजा राममोहन का जन्म देश के उस भाग में हुआ था जहाँ पर उस समय आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से स्थिति बड़ी दयनीय थी। संयोगवश यही प्रदेश अंग्रेजों के सीधे सम्पर्क में आया। इस तरह अज्ञान, आडंबर और रूढ़िवादिता तथा पश्चिम के आधुनिक विचारों के बीच शीघ्र ही अंतर क्रिया (Interatction) शुरू हो गयी और नेता के रूप में राजा राममोहन राय प्रकट हुए। उन्होंने हिन्दू धर्म से सम्बन्धित महत्वपूर्ण ग्रंथों तथा उस समय समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं का अध्ययन किया और मूल कारणों को जाना। राम मोहन राय समाज की बुराइयों से तो अवगत हुए परन्तु यह भी निष्कर्ष निकाला कि विश्व के अन्य धर्मो और आधुनिक पाश्चात्य ज्ञान एवं विचारों को नकारा नहीं जा सकता। अब वे समझ गये थे कि भारतीय समाज को केवल पश्चिमी संस्कृत ही पुनर्जीवित कर सकती है। वे इस बात से सहमत हो गये कि यदि भारतवासी अपना पुनद्धार चाहती है तो परिचम के युक्त संगत वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानव गरिमा तथा सामाजिक एकता के सिद्धान्त को स्वीकार करें और यह सब जानने के लिए अंग्रेजी शिक्षा का जबर्दस्त वकालत की।

1814 में राममोहन राय ने कलकत्ता में अपने युवा सहयोगियों के साथ ''आत्मीय सभा'' की स्थापना की, यह तब संभव हुआ जब उन्होंने कम्पनी की सेवा से त्याग पत्र दे दिया। अपने विशद ज्ञान के कारण इन्होंने हिन्दू धर्म में उत्पन्न कुरीतियों और आडंबरों पर कड़ा विरोध प्रकट किया तथा मूर्तिपूजा की आलोचना की और प्रमाण के साथ सिद्ध किया कि हिन्दुओं के सभी प्राचीन मौलिक ग्रंथों ने एक ब्रह्म का उपदेश दिया है। इस समर्थन में उन्होंने वेदों और पाँच मुख्य उपनिषदों का बंगला भाषा में अनुवाद किया। उन्होंने अनावश्यक धार्मिक अनुष्ठानों को महत्वहीन बताया और पंडित–पुरोहितों का कड़ा विरोध प्रकट किया, क्योंकि वे इन सभी को इन आडंबरों का जन्मदाता मातते थे।

राममोहन प्राचीन ग्रंथों एवं दर्शन में विश्वास रखते थे लेकिन अंतिम रूप से वे मानव विशेष और तर्कशक्ति को मानते थे। उनका विचार था कि पाश्चात्य या प्राच्य की सत्यता की अंतिम कसौटी मानव विवेक को ही माना जाय। वे कहते थे कि यदि कोई भी दर्शन, संस्कृति आदि तर्क पर खरा नहीं उतरता है और मानव समाज के लिए उपयोगी नही लगता है तो मनुष्य को बिना सोचे–समझे उसे शीघ्र त्याग देना चाहिए। मानव विवेक की उन्होंने न केवल हिन्दू धर्म के पक्ष में,

बौद्धिक मापदंड माना बल्कि संसार के सभी धर्मों के लिए परीक्षक स्वरूप समझा। ईसाई धर्म के अंधविश्वासों पर भी उन्होंने जमकर प्रहार किया इससे उनके वे सभी मित्र जो ईसाई थे, निराश हुए चूँकि वे समझते थे कि राममोहन राय हिन्दू धर्म की आलोचना कर रहे है। अंततः वे ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेगें। ऐसा ही कुछ भ्रम मुसलमानों को भी हुआ था। फिर भी सभी धर्मों में, विशेषकर ईसाई धर्म में इनकी आस्था हमेशा बनी रही। राममोहन राय संसार के सभी धर्मों की मौलिक एकता को स्वीकार करते है तथा यह कहते है कि ईसाई और इस्लाम धर्म की अच्छाइयों को हिन्दू धर्म में समाहित करके तथा पश्चिम एवं पूरब की संस्कृतियों के श्रेष्ठ तत्वों को मिलाकर एक उत्तम एवं महान संश्लेषण (grand syntheses) प्रस्तुत किया जाय। उनका विचार था कि संसार के सभी धर्मों का मौलिक उद्देश्य एक ही होता है और सभी धर्म को मानने वाले आपस में भाई–भाई होते है।

राममोहन राय की नवीन लेखन शैली से प्रभावित होकर बेन्थम ने यहाँ तक कह डाला कि '' इस शैली के साथ यदि एक हिन्दू का नाम जुड़ा होता तो हम यह समझे कि यह बहुत ही उच्च शिक्षित अंग्रेजी कलम से निकली है।'' इन्होंने कुरान, बाइबिल तथा हिन्दू का अन्य भारतीय धर्मशास्त्रों के विचारों का गहन अध्ययन कर आपेक्षिक ज्ञान प्राप्त किया था। 1809 ई0 में इनका पहला ग्रंथ जो फारसी भाषा में तोहफत–उल–मुहदीन (एकेश्वर वादियों को उपहार) था, प्रकाशित हुआ। जिसमें मूर्तिपूजा का विरोध बताया गया है। 1816 ई0 में इन्होंने वेदान्त सोसायटी की स्थापना की। उपनिषदों में व्यक्त आत्माा की अमरता के सिद्धान्त को राममोहन स्वीकार करते हैं। इनके द्वारा 1820 ई0 में लिखी गई ''प्रीसेप्टस ऑफ जीसस'' जो 1823 ई0 में लन्दन से प्रकाशित हुई थी, जान डिग्वी का विशेष योगदान था। इसमें इन्होंने ईसाई त्रयी (पिता, पुत्र, परमात्मा) अर्थात चमत्कारी कहानियों को नकारते हुए मात्र न्यूटेस्टामेण्ट के नैतिक तत्वों की प्रशंसा करते है। 1821 ई0 में इनके द्वारा कलकत्ता यूनीटेरियन कमेटी स्थापित की गयी थी। राम मोहन में अदम्य उत्साह और शक्ति थी। वे न किसी से डरते थे और न ही किसी समस्या से घबड़ाते थे। 20 अगस्त 1828ई0 को उन्होंने ब्रह्म सभा के नाम से एक नये समाज की स्थापना की जो आगे चलकर ब्रह्म समाज के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस सभा का उद्देश्य था राम मोहन राय के अनुसार हिन्दू धर्म में सुधार लाना तथा मूर्ति पूजा का विरोध करना और एक ब्रह्म की पूजा का उपदेश देना था। इसमें धार्मिक गुरूओं की आवश्यकता नहीं मानी गयी राम मोहन राय ने डेविड हेयर के सहयोग से 1817ई0 में कलकत्ता में हिन्दू कालेज की स्थापना की। 1825ई0 में वेदान्त कालेज की स्थापना

की। इनके समय की सबसे ज्वलन्त समस्या सती प्रथा थी, इन्होंने इसका विरोध अपनी पत्रिका ''संवाद कौमुदी'' के द्वारा किया और सरकार 1829ई0 में सती प्रथा पर लगाये गये प्रतिबन्ध का स्वागत किया। इंग्लैण्ड में भी इसका विरोध किया गया।

1821ई0 में नेपल्स की क्रान्ति की विफलता से मोहन राय काफी दुःखी हुए परन्तु 1823ई0 में स्पेनिश क्रान्ति अमेरिका में सफल होने पर इन्होंने भोज देकर खुशी का जश्न मनाया। 1823ई0 में एडम्स के प्रेस अध्यादेश से प्रेस की स्वतन्त्रता समाप्त होने पर इन्हें काफी कष्ट हुआ, इसके विरोध में राममोहन राय, द्वारिका नाथ टैगोर तथा अन्य लोगों ने उच्चतम् न्यायालय में एक वाद दायर किया। बाद में खारिज हो जाने पर प्रिवी कौंसिल में अपील की। इसी प्रकार 1827ई0 का जूरी एक्ट का भी इन्होंने इसलिए विरोध किया कि इसमें धार्मिक आधार पर हिन्दू और मुस्लिम भाइयों में विभेद पैदा किया गया था।

मुगल सम्राट अकबर द्वितीय द्वारा 1830 ई0 में राममोहन राय को राजा की पदवी से नवाजा गया तथा मुगल दरबार द्वारा इन्हें इंग्लैण्ड भेजा गया था वहाँ जाकर इन्होंने भरतीयों की समस्याएँ ब्रिटिश गर्वनमेंन्ट को अवगत कराकर उसे सुलझाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

राजा राम मोहन राय किसी नये धर्म की स्थापना के पक्ष में नही थे बल्कि वे इसमें सुधार करना चाहते थे, इनके सुधारवादी एवं प्रगतिशील विचारों से समकालीन रूढ़िवादियों ने विरोध जताया तथा राधाकान्त देव ने इनके ब्रह्म समाज के सिद्धान्तों का विरोध करने के लिए एक नये ''धर्म सभा'' का गठन तक कर डाला। 1833 ई0 में इंग्लैण्ड के ब्रिस्टल नामक स्थान पर इनका निधन हो गया, तत्पश्चात् द्वारिकानाथ टैगोर, देवेन्द्र नाथ टैगोर और केशव चन्द्र सेन ने इस आन्दोलन को लोकप्रिय बनाया तथा अहम भूमिका निभाई।

राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता
U.G.C NET, J.R.F and
Research Scholor
Mob.- 7054231078